

7-जीवन साधना के स्वर्णिम सूत्र

अध्याय 1: सुधरें-सँभलें तो काम चले

प्रश्न 1: मनुष्य प्रकृति के प्रपंच में कैसे उलझ जाता है? उत्तर: प्रकृति अपने खेल-खिलवाड़ में निरंतर लगी रहती है, जैसे पंचतत्त्वों को बटोरना और बिगाड़ना. मनुष्य इन कौतुकों को बाजीगर के तमाशे या सिनेमा के पर्दे की तरह देखता है, अपनी सुध-बुध खो बैठता है. वह इन प्रपंचों को वास्तविक मानकर हँसता, रोता, आक्रोश व्यक्त करता है, जिससे वह उद्विग्न और खिन्न हो जाता है. यह भटकाव उसे अपने वास्तविक जीवन-कार्यों से दूर कर देता है और वह अवास्तविक कल्पनाओं में उड़ने लगता है.

प्रश्न 2: मनुष्य अपने भाग्य का निर्माता स्वयं कैसे है? उत्तर: हर मनुष्य अपने लिए अपनी दुनिया स्वयं रचता है, जिसमें किसी दूसरे का हस्तक्षेप नहीं होता. संकल्प भरी साहसिकता से मनुष्य हर बाधा को पार कर सकता है और अपने अभीष्ट लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है. जो स्वयं को दीन-हीन समझते हैं, उन्हें परिस्थितियाँ कठिन लगती हैं, पर जो अपनी महानता में विश्वास रखते हैं, वे प्रतिकूलताओं को अनुकूलता में बदल देते हैं. अपने व्यक्तित्व को ऊँचा उठाना या गिराना मनुष्य की अपनी ही जिम्मेदारी है, और यही उसे अपने भाग्य का निर्माता बनाता है.

प्रश्न 3: दूसरों की सहायता करने से पहले मनुष्य को किन बातों पर ध्यान देना चाहिए? उत्तर: जो लोग गई-गुजरी स्थिति में हैं, उनकी सहायता करना मानवोचित कर्तव्य है. परंतु यह नहीं भूलना चाहिए कि जब तक ऐसे लोगों का मनोबल नहीं उठाया जाता और उनमें पुरुषार्थपूर्वक आगे बढ़ने का संकल्प नहीं जगाया जाता, तब तक बाहरी सहायता स्थायी परिणाम नहीं दे सकती. ईश्वर भी उन्हीं की सहायता करता है, जो अपनी सहायता स्वयं करते हैं. इसलिए, किसी की सच्ची सहायता करने के लिए पहले उसके आत्मविश्वास और आंतरिक शक्ति को जागृत करना आवश्यक है.

प्रश्न 4: वेदांत विज्ञान के चार सूत्र क्या बताते हैं? उत्तर: वेदांत विज्ञान के चार महत्त्वपूर्ण सूत्र हैं: “तत्त्वमसि”, “अयमात्मा ब्रह्म”, “प्रज्ञानं ब्रह्म”, “सोऽहम्”. इन सभी सूत्रों का एक ही अर्थ है कि **परिष्कृत जीवात्मा ही परब्रह्म है**. जिस प्रकार हीरा कोयले का परिष्कृत स्वरूप है या डिस्टिल्ड वाटर भाप से शुद्ध किया हुआ पानी है, उसी प्रकार मनुष्य भी भटका हुआ देवता है. यदि वह अपने मल-आवरण को हटा दे, तो उसका अतुलित सौंदर्य प्रकट होता है.

प्रश्न 5: गीता के अनुसार मन का क्या महत्त्व है? उत्तर: गीताकार ने अनेक स्थानों पर पुष्टि की है कि **मनुष्य स्वयं ही अपना शत्रु और स्वयं अपना मित्र है**. मन ही व्यक्ति के बंधन और मोक्ष का एकमात्र कारण है. गीता में कहा गया है कि अपने आप को ऊँचा उठाओ, उसे गिराओ मत. ये कथन केवल अलंकार नहीं, बल्कि पूर्ण सत्य हैं. एक आत्मपुरुष के अनुसार, मनुष्य की एक मुट्ठी में स्वर्ग और दूसरी में नरक है, और वह दोनों में से किसी को भी चुनने के लिए स्वतंत्र है.

अध्याय 2: उसे जड़ में नहीं, चेतन में खोजें

प्रश्न 1: ईश्वर को कहाँ खोजना सबसे उचित है और क्यों? उत्तर: सामान्यतः माना जाता है कि विधाता ही निर्माता है और ईश्वर की इच्छा के बिना पत्ता नहीं हिलता. लेकिन यदि भ्रमग्रस्त न होना हो, तो ईश्वर से मिलने का सबसे निकटवर्ती स्थान अपना अंतःकरण ही है. ईश्वर सर्वव्यापी और चेतन है, उसे प्रतिमाओं तक सीमित नहीं किया जा सकता. **चेतना वस्तुतः चेतना के साथ ही घुल-मिल सकती है**. इसलिए, बाहरी दुनिया में भाग-दौड़ करने की बजाय, अपने ही अंतःकरण में ईश्वर को खोजना चाहिए.

प्रश्न 2: सूफी संत ने मंदिर में प्रतिमा के स्थान पर दर्पण रखने का सुझाव क्यों दिया? **उत्तर:** एक भक्त ने सूफी संत से मंदिर की रूपरेखा बनाने का अनुरोध किया. संत ने गंभीर होकर सलाह दी कि मंदिर में प्रतिमा की जगह एक विशाल दर्पण स्थापित किया जाए. इसका उद्देश्य यह था कि दर्शक उसमें अपनी छवि देखकर यह अनुभव कर सकें कि ईश्वर का निवास उनके अपने भीतर ही है. यह उन्हें यह भी समझाएगा कि आत्मसत्ता को परिष्कृत करने पर वही परमात्मसत्ता में विकसित हो सकती है और दिव्य वरदानों की वर्षा कर सकती है.

प्रश्न 3: मनःस्थिति परिस्थितियों की जन्मदात्री कैसे है? **उत्तर:** मनःशास्त्र के विज्ञानी कहते हैं कि मनःस्थिति ही परिस्थितियों को जन्म देती है. मनुष्य जैसा सोचता है, वैसा ही करता है और वैसा ही बन जाता है. उसके भले-बुरे कर्म ही बाद में संकट या सौभाग्य बनकर सामने आते हैं, जिससे उसे रोना या हँसना पड़ता है. इसलिए, बाहरी सहायता या अनुकूल परिस्थितियों की तलाश करने के बजाय, अपनी भावना, मान्यता, आकांक्षा, विचारणा और गतिविधियों को परिष्कृत करना अधिक महत्वपूर्ण है.

प्रश्न 4: "मनुष्य अपने स्वरूप को भूलकर ही विपत्तियों में फँसता है" – इस कथन का क्या अर्थ है? **उत्तर:** अध्यात्मवेत्ता तर्क और प्रमाण के साथ बताते हैं कि मनुष्य अपने वास्तविक स्वरूप, सत्ता, महत्ता, लक्ष्य और मार्ग को भूलकर ही असंख्य विपत्तियों में फँसता है. यदि वह स्वयं को सुधार ले, तो उसका सुधरा हुआ प्रतिबिम्ब व्यक्तियों और परिस्थितियों में दिखाई देने लगेगा. यह संसार एक गुंबद की तरह है, जो अपनी ही आवाज को प्रतिध्वनित करता है. इसलिए, आत्म-सुधार ही विपत्तियों से निकलने का मार्ग है.

अध्याय 3: निकृष्टता से उबरें, महानता अपनाएँ

प्रश्न 1: बादलों की वर्षा और भूमि की उपजाऊपन का उदाहरण मनुष्य की क्षमताओं को कैसे समझाता है? **उत्तर:** बादल सभी जगह समान रूप से बरसते हैं, लेकिन पानी वहीं जमा होता है जहाँ गहराई या पात्रता होती है. वर्षा से व्यापक भू-क्षेत्र में हरियाली उगती है, पर रेगिस्तानों और चट्टानों में एक तिनका भी नहीं उगता. इसमें बादल का पक्षपात नहीं, बल्कि भूमि की अनुर्वरता जिम्मेदार है. इसी प्रकार, मनुष्य की क्षमताएँ तभी सफल होती हैं जब वह अपने भीतर की निकृष्टता को हटाकर महानता की पात्रता विकसित करे.

प्रश्न 2: मनुष्य की क्षमताएँ कब नाकारा बन जाती हैं? **उत्तर:** यदि मनुष्य लोभ की हथकड़ियों, मोह की बेड़ियों और अहंकार की जंजीरों में जकड़ा रहता है, तो उसकी समस्त क्षमताएँ नाकारा बन जाती हैं. वह बँधुआ मजदूर या कठपुतली की तरह विवश हो जाता है, अपना मौलिक पराक्रम खो बैठता है, और दूसरों की इच्छा पर चलने को मजबूर होता है. कुसंस्कार और कुप्रचलन सही मार्ग अपनाने में बड़ी बाधा बन जाते हैं, जिससे उत्कृष्टता की दिशा में उसकी प्रगति रुक जाती है.

प्रश्न 3: वासनाएँ और तृष्णाएँ मनुष्य के जीवन को कैसे प्रभावित करती हैं? **उत्तर:** वासनाएँ मनुष्य को नीबू की तरह निचोड़ लेती हैं, उसके जीवन से स्वास्थ्य, संतुलन और आयुष्य जैसी सब कुछ निचोड़कर उसे छिलके जैसा निस्तेज बना देती हैं. तृष्णाओं की खाई इतनी गहरी है कि रावण जैसे पराक्रमी भी उसे पाट नहीं पाए. सिकंदर जैसे सफल धनी भी खाली हाथ गए. अहंकार और स्वार्थ सिद्धि की ललक व्यक्ति को दिग्भ्रमित करती है और उसकी बहुमूल्य जीवन-संपदा को कौड़ी के मोल गँवा देती है.

प्रश्न 4: मानव जीवन का परम पुरुषार्थ क्या है? **उत्तर:** मानव जीवन का परम पुरुषार्थ और सर्वोच्च सौभाग्य यह है कि वह अपनी निकृष्ट मानसिकता से मुक्ति पाए. उसे भ्रष्ट चिंतन और दुष्ट आचरण वाली आदतों को और अधिक गहरा करने से स्पष्ट इंकार करना चाहिए. अपनी भूल समझ में आने पर उल्टे पैरों लौट पड़ने में भी कोई बुराई नहीं है. मनुष्य वास्तव में धरती पर रहने वाला देवता है, नर-कीटक या नर-पिशाच जैसी स्थिति उसने अपनी इच्छा से स्वीकार की है. कायाकल्प करके वह नर-नारायण बन सकता है.

अध्याय 4: धर्म धारणा की व्यावहारिकता

प्रश्न 1: वर्तमान युग-संधि काल में प्रतिभाशाली व्यक्तियों की क्या भूमिका है? उत्तर: शांति के समय सैनिक अस्त्र-शस्त्र "मालखाने" में रखते हैं, पर युद्ध आने पर उन्हें दुरुस्त करके प्रयोग करते हैं। इसी तरह, विवाह-शादी के समय गहनों को चमकाया जाता है। वर्तमान युग-संधि काल में प्रतिभाशाली लोगों को प्रयुक्त किया जाएगा। यह समय उनके व्यक्तित्व को प्रखर बनाने का है, उनकी टूट-फूट को सुधारा और सही किया जाना चाहिए, ताकि वे महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकें।

प्रश्न 2: चिन्तन, चरित्र और व्यवहार में उत्कृष्टता का समावेश क्यों महत्वपूर्ण है? उत्तर: व्यक्ति की समर्थता, दक्षता, प्रामाणिकता और प्रभाव-प्रखरता केवल तभी निखरती है जब उसके चिंतन, चरित्र और व्यवहार में उत्कृष्टता का अधिकाधिक समावेश हो। अस्त-व्यस्त लोग कठिनाइयों से जीते हैं, जबकि प्रखर प्रतिभा वाले लोगों की विशिष्टताएँ चमकती हैं और दूसरों को आकर्षित करती हैं। ऐसे लोग दूसरों की सहायता करने में भी समर्थ होते हैं और सम्मान भी प्राप्त करते हैं। बदलते समय में केवल उत्कृष्ट व्यक्तित्व वाले लोग ही सफल हो पाएँगे।

प्रश्न 3: समर्थता, मनस्विता और जीवट से क्या तात्पर्य है? उत्तर: समर्थता को ओजस्, मनस्विता को तेजस् और जीवट को वर्चस् कहते हैं। ये वे दिव्य संपदाएँ हैं जिनके बदले संसार में कुछ भी मनचाहा खरीदा जा सकता है। दूसरों की सहायता भी वही लोग कर पाते हैं जिनके पास अपना वैभव और पराक्रम होता है। आने वाले समय में ऐसे ही लोगों की आवश्यकता पड़ेगी, जिनकी प्रतिभा सामान्यजनों से बड़ी-चढ़ी हो। अपने व्यक्तित्व को दुर्गुणों से मुक्त करके सद्गुणों से सम्पन्न करना ही इस स्तर को प्राप्त करने की कसौटी है।

प्रश्न 4: परिवार संस्था को नर-रत्नों की खदान कैसे बनाया जा सकता है? उत्तर: अपने दृष्टिकोण, स्वभाव और अभ्यास में सद्गुणों को उतारने का सबसे अच्छा अवसर परिवार-परिकर के बीच मिलता है। यदि घर के सभी सदस्य सहयोगपूर्वक आवश्यक कार्य करें और उत्साह की प्रशंसा करें, तो परिवार के हर सदस्य को सुसंस्कारी बनाने का अवसर मिल सकता है। परिवार संस्था ही नर-रत्नों की खदान बन सकती है। जो परिवार में सद्गुणों का अभ्यास करते हैं, उनके लिए लोक व्यवहार में शालीनता का परिचय देना और सफलता प्राप्त करना आसान हो जाता है।

अध्याय 5: पंचशीलों का अभ्यास करें

प्रश्न 1: प्राचीन यम-नियमों से भिन्न व्यावहारिक पंचशील क्या हैं? उत्तर: प्राचीनकाल में साधकों को सत्य, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, अस्तेय, अपरिग्रह जैसे यम-नियमों का पालन करना पड़ता था। ये उस समय के सामाजिक वातावरण में साध्य रहे होंगे, पर आज की स्थिति में ये कठिन लगते हैं। अब व्यावहारिक पंचशीलों का अभ्यास आदतों में सम्मिलित हो सके तो भी काम चल जाएगा। ये पंचशील हैं: श्रमशीलता, मितव्ययिता, शिष्टता, सुव्यवस्था और सहकारिता। इनका पालन प्राचीन तप-साधना के समान ही साधनात्मक साहस है।

प्रश्न 2: श्रमशीलता आज के समय में क्यों महत्वपूर्ण है? उत्तर: आलस्य, प्रमाद और विलासिता के कारण मनुष्य बुरी तरह हरामखोर बन गया है। उपलब्ध शक्ति का बहुत कम भाग ही उत्पादक श्रम में लगता है, जिससे शारीरिक-मानसिक असमर्थता पनपती है और आर्थिक प्रगति रुक जाती है। श्रम के बिना शरीर नीरोग नहीं रह सकता और उत्पादन भी संभव नहीं है। कामचोरी और कम श्रम करके अधिक लाभ पाने की प्रवृत्तियाँ समाज को अपंग बना रही हैं। इसलिए, समय को तत्परता और तन्मयता भरे परिश्रम से जोड़ना अत्यंत आवश्यक है।

प्रश्न 3: अपव्यय को आज का दूसरा अभिशाप क्यों कहा गया है? उत्तर: अपव्यय आज का दूसरा अभिशाप है, क्योंकि दुर्व्यसनों, फैशन और आडंबरों में इतना समय और पैसा खर्च होता है कि उसे बचाकर अनेक महत्वपूर्ण

कार्य पूरे किए जा सकते हैं. फिजूलखर्ची की कोई सीमा नहीं होती, और जब उसकी ललक बढ़ती है, तो उसे पूरा करना साधारण श्रम से संभव नहीं हो पाता, जिससे लोग बेईमानी का सहारा लेते हैं. अमीरी के इस प्रदर्शन से अब ईर्ष्या ही उपजती है, और “सादा जीवन—उच्च विचार” की उत्कृष्टता का समापन होता जाता है.

प्रश्न 4: शिष्टता जीवन की सफलता में कैसे योगदान देती है? उत्तर: शिष्टता, सभ्यता की आधारशिला है. यह विनम्रता और सज्जनोचित व्यवहार का प्रतीक है, जो बड़ों और छोटों दोनों के साथ तत्परतापूर्वक किया जाना चाहिए. यह उक्ति बहुत महत्वपूर्ण है कि “शालीनता बिना मोल मिलती है, परन्तु उससे सब कुछ खरीदा जा सकता है”. शालीन व्यक्तियों के परिवार में कलह नहीं होती, उनके मित्र और सहयोगी बढ़ते चले जाते हैं. जीवन की सफलता में शालीनता का असाधारण योगदान होता है, जबकि अशिष्ट व्यक्ति अपनों को भी पराया कर देता है.

प्रश्न 5: सुव्यवस्था का क्या अर्थ है और यह कैसे प्रगति का आधार है? उत्तर: सुव्यवस्था का अर्थ है अपने समय, श्रम, मनोयोग, जीवनक्रम, शरीर और सामर्थ्य जैसे सभी संसाधनों का **सुनियोजन**. इन्हें अस्त-व्यस्त होने से बचाकर अधिक समय तक इनका लाभ उठाना चाहिए. यह स्वभाव में सुव्यवस्था होने पर ही संभव है और लोक व्यवहार का सबसे बड़ा सद्गुण है. जिसे अपने संसाधनों का सदुपयोग और सुनियोजन करना आ गया, उसे गुणवान माना जाता है. प्रबंधक और पर्यवेक्षक जैसे प्रतिष्ठित पद उन्हीं को मिलते हैं जो स्वयं और अपने परिकर को सुव्यवस्थित रखते हैं; यही प्रगति का प्रमुख आधार है.

प्रश्न 6: सहकारिता का क्या महत्व है? उत्तर: पाँचवाँ शील है सहकारिता, जिसका अर्थ है मिल-जुलकर काम करना और आदान-प्रदान में सतर्कता बरतना. परिवार, कारोबार और लोक व्यवहार में सामंजस्य तभी बनता है जब उदारता भरी सहकारिता को क्रिया-कलापों में सुनियोजित रखा जाए. जो एकाकीपन से ग्रसित होता है, उसे असामाजिक और उपेक्षित रहना पड़ता है. बड़े कार्य संयुक्त शक्ति से ही संपन्न हो पाते हैं. संकीर्ण स्वार्थपरता की जगह उदार सहकारिता की प्रवृत्ति जगाने से ही संघ शक्ति जागृत होती है, जो किसी भी संस्था या व्यवसाय की प्रगति के लिए आवश्यक है.

अध्याय 6: उच्च मानसिकता के चार सूत्र

प्रश्न 1: उच्च मानसिकता के चार सूत्र क्या हैं और वे क्यों महत्वपूर्ण हैं? उत्तर: व्यवहार की धर्मधारणा और सेवा-साधना सद्गुणों को जीवन में उतारने से बनती है. इसके अतिरिक्त, मानसिकता के क्षेत्र में चरित्र और भावनात्मक विशेषताओं का समावेश करने से लोक-परलोक दोनों समुन्नत हो जाते हैं. इन्हें चार वेद, चार धर्म या चार दिव्य वरदान कहा जा सकता है. ये चार मानसिक विशेषताएँ हैं: (1) समझदारी, (2) ईमानदारी, (3) जिम्मेदारी, और (4) बहादुरी. ये सूत्र मनुष्य को एक उत्कृष्ट जीवन जीने में मदद करते हैं.

प्रश्न 2: समझदारी से क्या तात्पर्य है और यह कैसे व्यक्ति के जीवन को सुधारती है? उत्तर: समझदारी का अर्थ है तात्कालिक आकर्षण पर संयम बरतना और दूरगामी परिणामों को समझना, फिर उसके अनुसार निर्णय लेना. चटोरेपन या कामुकता के उन्माद में लोग अभक्ष्य-भक्षण करते या शरीर-मस्तिष्क को खोखला करते रहते हैं. अदूरदर्शिता के कारण लोग अनाचार करते और कष्ट सहते हैं. यदि समझदारी साथ दे, तो इंद्रिय संयम, समय संयम और अर्थ संयम अपनाते हुए उन कमियों को दूर किया जा सकता है जो जीवन-संपदा को अस्त-व्यस्त कर देती हैं.

प्रश्न 3: ईमानदारी का महत्व स्पष्ट कीजिए। उत्तर: ईमानदारी बरतना सरल है, जबकि बेईमानी में अनेक छल-कपट करने पड़ते हैं. ईमानदारी के सहारे ही व्यक्ति प्रामाणिक और विश्वासी बन सकता है, जिससे उसे जन-जन का सहयोग और सम्मान मिलता है. बेईमान लोग अपना विश्वास गँवाते हैं और मित्रों को भी विरोधी

बना लेते हैं। यहाँ तक कि बेईमान व्यक्ति भी ईमानदार नौकर रखना पसंद करता है, जो ईमानदारी की शक्ति को दर्शाता है। जिनकी प्रतिष्ठा अंत तक बनी रहती है, उन्होंने ईमानदारी की नीति को सच्चे मन से अपनाया है।

प्रश्न 4: जिम्मेदारी का भाव व्यक्ति के व्यक्तित्व को कैसे निखारता है? उत्तर: हर व्यक्ति शरीर रक्षा, परिवार व्यवस्था, समाज निष्ठा और अनुशासन जैसे कर्तव्यों से बंधा हुआ है। जिम्मेदारियों को निभाने पर ही मनुष्य का शौर्य निखरता है और विश्वास बनता है। विश्वसनीयता के आधार पर ही उसे अधिक महत्वपूर्ण जिम्मेदारियाँ सौंपी जाती हैं, और वह प्रगति के उच्च शिखर पर पहुँचता है। लोग ऐसे जिम्मेदार व्यक्तियों को आग्रहपूर्वक बुलाते और सम्मान देते हैं। बड़े पराक्रम करने का सामर्थ्य भी ऐसे ही लोगों में आता है, जिससे उनका व्यक्तित्व निखरता है।

प्रश्न 5: बहादुरी क्या है और यह जीवन की कठिनाइयों से कैसे पार पाती है? उत्तर: चौथी आध्यात्मिक संपदा बहादुरी है, जिसका अर्थ है हिम्मत भरी साहसिकता और निर्भीक पुरुषार्थ-परायणता। इसमें जोखिम उठाते हुए भी नीति-निष्ठा से जुड़े मार्ग पर चलना शामिल है। बुराईयाँ संघर्ष के बिना खत्म नहीं होतीं, और संघर्ष के लिए साहस अनिवार्य है। कायर लोग अक्सर अपने ऊपर आक्रमण और शोषण करने वालों को आमंत्रित करते हैं, क्योंकि उनमें अनीति के आगे सिर न झुकाने की हिम्मत नहीं होती। बहादुरों की अपेक्षा कायरों पर हमले हजार गुना अधिक होते हैं। साहस ही एकमात्र साथी है जो मनुष्य को कठिनाइयों से पार पाने और प्रगति के पथ पर आगे बढ़ने में समर्थ बनाता है।

अध्याय 7: सुनिश्चित राजमार्ग अपनाएँ

प्रश्न 1: नवधा भक्ति के स्थान पर किन नौ गुणों को अपनाने की बात कही गई है? उत्तर: पूजा-अर्चना के कर्मकाण्डों के बजाय, नौ गुणों को नवधा भक्ति के स्थान पर प्रतिपादित किया गया है। ये नौ गुण पंचशील (श्रमशीलता, मितव्ययिता, शिष्टता, सुव्यवस्था, सहकारिता) और उच्च मानसिकता के चार सूत्र (समझदारी, ईमानदारी, जिम्मेदारी, बहादुरी) हैं। इन नौ गुणों को चिंतन, चरित्र, व्यवहार – गुण, कर्म, स्वभाव में गहराई तक समाविष्ट करना चाहिए। इन्हें अपनाना एक सुनिश्चित राजमार्ग है जो प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनों क्षेत्रों में गरिमामय उपलब्धियाँ दिलाता है।

प्रश्न 2: "द्विजत्व" या दूसरा जन्म क्या है और यह कैसे प्राप्त किया जा सकता है? उत्तर: "द्विजत्व" या दूसरा जन्म एक महान उपलब्धि है, जिसे कभी पशु को देवता बना देने वाली उदात्तीकरण की प्रक्रिया कहा जाता था। इसमें व्यक्ति की आकृति नहीं, बल्कि उसकी प्रकृति बदलती है। इस कायाकल्प के लिए किसी बाहरी धन्वंतरि या अश्विनीकुमारों के अनुग्रह की आवश्यकता नहीं है। यह नौ गुणों (पंचशील और चार उच्च मानसिक सूत्र) को अपने चिंतन, चरित्र और व्यवहार में गहराई तक समाविष्ट करने से प्राप्त होता है। इससे व्यक्ति अपनी वर्तमान स्थिति में भी वरिष्ठता प्राप्त करता है।

प्रश्न 3: "धर्म उसे कहते हैं, जो धारण किया जाए" – इस उक्ति का क्या अभिप्राय है? उत्तर: केवल मिठाई-मिठाई रटते रहने या उसका वर्णन करते रहने से मुँह मीठा नहीं होता। उसका स्वाद लेने और लाभ उठाने के लिए उसे खाना और पचाना पड़ता है। इसी प्रकार, धर्म उसे कहते हैं, जिसे जीवन में धारण किया जाए। केवल कथा-प्रवचन सुनने या कर्मकाण्ड करने से बात नहीं बनती। धर्म के तत्त्वज्ञान को व्यावहारिक जीवनचर्या में उतारने के अतिरिक्त और कोई विकल्प नहीं है, जैसे व्यायाम के बिना कोई पहलवान नहीं बन सकता।

अध्याय 8: कर्मकाण्डों के साथ भाव सम्वेदना का समावेश

प्रश्न 1: ईश्वर की प्रतीक-प्रतिमाएँ क्यों बनाई जाती हैं? उत्तर: ईश्वर निराकार है और उसे देखा नहीं जा सकता. उसकी प्रतीक-प्रतिमाएँ इसलिए बनाई जाती हैं ताकि मानवीय कलेवर में उत्कृष्टता की पक्षधर भाव-श्रद्धा को उस माध्यम से जोड़ा जा सके. इससे सर्वसाधारण के लिए परब्रह्म की विशिष्टताओं की परिकल्पना करना आसान हो जाता है. जैसे राष्ट्रध्वज में देशभक्ति की भावना जोड़कर उसे सम्मान दिया जाता है, वैसे ही प्रतिमा में ईश्वर की न्यायनिष्ठ सत्ता का आरोपण कर भाव-श्रद्धा को विकसित किया जाता है.

प्रश्न 2: ईश्वर और जीव के मिलन की प्रक्रिया क्या है? उत्तर: ईश्वर और जीव के मिलन की प्रक्रिया को अग्नि के साथ ईंधन के एकात्म होने, नाले के नदी में विलय होने, या पानी के दूध में घुलने से समझा जा सकता है. इसमें ईंधन को अपना स्वतंत्र अस्तित्व मिटाकर अग्नि के तद्रूप होने का साहस जुटाना पड़ता है. पति-पत्नी भी समर्पण की मानसिकता अपनाकर द्वैत से अद्वैत की स्थिति में पहुँचते हैं. मनुष्य जब देवत्व से सम्पन्न होता है, तो वह देवता बन जाता है, और जब उसमें परमात्मा जैसी व्यापकता आती है, तो आत्मा की स्थिति परमात्मा जैसी हो जाती है.

अध्याय 9: प्रतीक पूजा का तत्त्वदर्शन

प्रश्न 1: ईश्वर की सच्ची पूजा या उपासना क्या है? उत्तर: विभिन्न मत-मतांतरों में अलग-अलग पूजा पद्धतियाँ प्रचलित हैं. उन सबके पीछे एक ही तथ्य और रहस्य काम करता है कि अपने आप को परिष्कृत एवं सुव्यवस्थित बनाया जाए. यही ईश्वर की एकमात्र सच्ची पूजा, उपासना और अभ्यर्थना है. विश्व व्यवस्था में संलग्न परमेश्वर को इतनी फुर्सत नहीं कि वह भक्तजनों की मनुहार सुने या उपहार ग्रहण करे. ये सब माध्यम केवल व्यक्ति को उत्कृष्टता के मार्ग पर चलने के लिए स्व-संकेत के रूप में किए जाते हैं.

प्रश्न 2: देवपूजा के कर्मकाण्डों को प्रतीकोपासना क्यों कहते हैं? उत्तर: देवपूजा के कर्मकाण्डों को प्रतीकोपासना कहते हैं, जिसका अर्थ है संकेतों के आधार पर क्रिया-कलापों को निर्धारित करना. देवता की प्रतिमा एक पूर्ण मनुष्य की परिकल्पना है, जिसके उपासक को भी हर स्थिति में सर्वांग सुंदर और नवयुवकों जैसी मनःस्थिति में रहना चाहिए. देवियाँ मातृसत्ता की प्रतीक हैं, और उन्हें पवित्रता की मान्यता के साथ देखा जाता है. ये प्रतीक साधक को नारी मात्र के प्रति पवित्र और श्रद्धापूर्ण मान्यताएँ विकसित करने की प्रेरणा देते हैं.

प्रश्न 3: पूजा-अर्ध में प्रयुक्त विभिन्न वस्तुओं का प्रतीकात्मक अर्थ क्या है? उत्तर: पूजा-अर्ध में जल, अक्षत, पुष्प, चंदन, धूप, दीप, नैवेद्य आदि वस्तुएँ रखी जाती हैं.

- जल शीतलता का प्रतीक है, जिसका अर्थ है शांत, सौम्य और संतुलित रहना.
 - धूप वातावरण को सत्प्रवृत्तियों से सुगंधित बनाने का संकेत देती है.
 - दीपक ज्ञान का प्रकाश फैलाने के लिए अपने साधनों के उत्सर्ग का संकेत है.
 - चंदन समीपवर्तियों को अपने जैसा सुगंधित बनाने और विकट परिस्थितियों में भी प्रमुदित रहने का प्रतीक है.
 - पुष्प हँसते-हँसाते, खिलते-खिलाते रहने की प्रकृति अपनाने का प्रतीक है.
 - अक्षत अपने उपार्जन का एक अंश दिव्य प्रयोजनों के लिए नियोजित करने में अटूट निष्ठा बनाए रखने और उदार बने रहने का प्रतीक है. भगवान को इन वस्तुओं की आवश्यकता नहीं होती, बल्कि ये प्रतीक हमें देवत्व के अवतरण हेतु स्वयं को पात्र बनाने के लिए प्रशिक्षित करते हैं.
-

अध्याय 10: उपासना-ध्यान-धारणा का स्वरूप और मर्म

प्रश्न 1: जप का वास्तविक अर्थ और महत्व क्या है? उत्तर: नाम जप का तात्पर्य है कि जिस परमेश्वर को और उसके विधान को हम भूले रहते हैं, उसे बार-बार स्मृति पटल पर अंकित करें और विस्मरण की भूल न होने दें। सुर-दुर्लभ मनुष्य जीवन की महती अनुकंपा और उसके साथ जुड़ी स्रष्टा की आकांक्षा को समझना और अपनाने की मानसिकता बनाए रखना ही नाम-जप का महत्व है। जैसे साबुन रगड़ने से शरीर और कपड़ा स्वच्छ होता है, वैसे ही जप करने वाले अपने व्यक्तित्व को इस आधार पर विकसित करते हैं।

प्रश्न 2: गायत्री मंत्र का जप और उदीयमान सूर्य का ध्यान करने का मुख्य प्रयोजन क्या है? उत्तर: परिजन प्रायः गायत्री मंत्र का जप और उदीयमान सूर्य का ध्यान करते हैं।

- गायत्री का अर्थ है सामूहिक विवेकशीलता। इस प्रक्रिया से अनुप्राणित होना ही गायत्री जप है।
- सूर्य की दो विशेषताएँ हैं: ऊर्जा और आभा। सूर्य ध्यान का मुख्य प्रयोजन है ऊर्जावान (प्रगतिशील) बनना, ज्ञान रूपी प्रकाश से सत्प्रवृत्तियों का विस्तार करना, स्वयं प्रकाशित रहना और दूसरों को प्रकाशवान बनाना। ध्यान के समय शरीर में ओजस्, मस्तिष्क में तेजस् और अंतःकरण में वर्चस् की भावना की जाती है।

प्रश्न 3: प्राणायाम में किस भावना को महत्व दिया गया है? उत्तर: प्राणायाम में नासिका द्वारा ब्रह्मांडव्यापी प्राण-तत्त्व को खींचने, धारण करने और घुसे हुए अशुभ को बाहर फेंकने की भावना की जाती है। संसार में भरा तो भला-बुरा सभी कुछ है, पर प्राणायाम के माध्यम से साधक यह भावना करता है कि वह अपने लिए मात्र दिव्यता प्राप्ति को ही उपयुक्त समझे। जो श्रेष्ठ और उत्कृष्ट है, उसी को पकड़ने और सत्ता में प्रतिष्ठित करने का प्रयत्न करें। प्राणायाम का उद्देश्य निरीह या कायर न रहकर प्राणवान बनना है, ताकि अपने और संपर्क क्षेत्र में प्राण-चेतना का विस्तार किया जा सके।

प्रश्न 4: गुरुवार के उपवास और ब्रह्मचर्य के पीछे क्या तत्वज्ञान है? उत्तर: साधना के साथ गुरुवार को हल्का-भारी उपवास और ब्रह्मचर्य पालन का प्रचलन जुड़ा है। इन दोनों के पीछे संयम साधना का तत्वज्ञान समाविष्ट है। इंद्रिय संयम, समय संयम, अर्थ संयम और विचार संयम की प्रक्रिया यदि बढ़ने दी जाए, तो वह साधकों को सच्चे अर्थों में तपस्वी बनने की स्थिति तक ले जाती है। ओजस्वी, तेजस्वी, मनस्वी बनने के त्रिविध लक्ष्य प्राप्त करने वाले ही सच्चे तपस्वी कहलाते हैं। तप की दिव्य शक्ति सामर्थ्य से अध्यात्म क्षेत्र का हर अनुयायी परिचित और प्रभावित होना चाहिए।

प्रश्न 5: दैनिक कार्यों की तरह उपासना का भी महत्व क्यों है? उत्तर: स्नान, भोजन, शयन जैसे नित्य कर्मों की तरह ही, उपासना-आराधना के लिए भी नित्य कुछ समय निकालना चाहिए। यह इसलिए आवश्यक है ताकि जीवन-लक्ष्य को हृदयंगम रखने में विस्मरण या प्रमाद उत्पन्न न हो। प्रातःकाल आँख खुलते ही नए जन्म की भावना करनी चाहिए और दिनचर्या इस प्रकार बनानी चाहिए कि समय, श्रम, चिंतन और व्यवहार में अधिकाधिक उत्कृष्टता का समावेश हो। रात्रि को सोते समय दिन के क्रियाकलापों की कठोर समीक्षा करनी चाहिए, ताकि अगले दिन अधिक सतर्कतापूर्वक शालीनता अपनाई जा सके।

प्रश्न 6: वर्तमान युग-धर्म क्या है? उत्तर: दान, पुण्य और तीर्थयात्रा जैसे धर्म कार्यों के लिए अंतराल में उमंग रहती है, जिसे ईश्वर का संकेत मानकर अपनाना चाहिए। समय के अनुरूप इन सभी का समन्वय विवेक-विस्तार की प्रक्रिया में केंद्रित हो जाता है। इसे ज्ञानयज्ञ, विचार क्रांति या लोकमानस का परिष्कार, सत्प्रवृत्ति संवर्धन आदि नामों से प्रतिपादित किया जाता है। वर्तमान युग-धर्म भ्रष्ट चिंतन और दुष्ट आचरण से उत्पन्न समस्याओं का निवारण करने के लिए जनमानस में दूरदर्शी विवेकशीलता को उभारना है। चिंतन, चरित्र और व्यवहार में उत्कृष्टता का विकास भाव-संवेदना जगाने से ही संभव है।

अध्याय 11: प्रस्तुत अनुपम सुयोग का लाभ उठाएँ

प्रश्न 1: आत्मपरिष्कार के लिए हरिद्वार के साधना सत्रों का क्या महत्व बताया गया है? उत्तर: आत्मपरिष्कार के लिए शांति कुंज में निरंतर चलने वाले नौ दिन के साधना सत्रों में हर साल एक बार या कम से कम दो वर्ष में एक बार हरिद्वार जाने की योजना बनानी चाहिए. इस उपक्रम को बैटरी चार्ज करने या बदली हुई परिस्थितियों के अनुरूप नया प्रकाश और मार्गदर्शन प्राप्त करने जैसा सुयोग समझा जा सकता है. यह विधा आत्मपरिष्कार के लिए अत्यंत कारगर सिद्ध होती देखी गई है.

प्रश्न 2: "चल ज्ञान मंदिर" या "ज्ञानरथ" क्या है और इसका क्या उद्देश्य है? उत्तर: "चल ज्ञान मंदिर" या "ज्ञानरथ" एक मंदिरनुमा धकेल गाड़ी है, जिस पर टेपेरिकॉर्डर और लाउडस्पीकर लगे होते हैं. इसे जहाँ कहीं भी ले जाया जाए, वहीं संगीत सम्मेलन और प्राणवान् संक्षिप्त धर्म प्रवचनों की श्रृंखला चल पड़ती है, जिससे नुक्कड़ सभा या प्रभातफेरी जैसा माहौल बन जाता है. इसमें इक्कीसवीं सदी की प्रेरणाओं से भरा सस्ता, लेकिन युग-धर्म का पक्षधर साहित्य भी रखा रहता है, जिसे बिना मूल्य पढ़ने के लिए दिया जाता है या बेचा जा सकता है. इसका उद्देश्य गाँव और मुहल्लों में नव जागरण का अलख जगाना है.

प्रश्न 3: वर्तमान समय में दिव्य चेतना की क्या पुकार है? उत्तर: इन दिनों दिव्य चेतना, सेवाभावी सज्जनों के समुदाय को अधिक विस्तृत करने में जुट गई है. युग का मत्स्यावतार अपने कलेवर को विश्वव्यापी बनाने के लिए आकुल-व्याकुल है. ऐसे में हमें अपनी मनमर्जी की पूजा-उपासना करने के बजाय, महाकाल के आमंत्रण पर उसके सुझाए मार्ग पर चलना चाहिए. हनुमान, अर्जुन, शिवाजी और विवेकानन्द जैसे महापुरुषों ने भी दिव्य चेतना के आह्वान को सुनकर तदनुरूप कार्य किया था. वर्तमान में यह पुकार विवेक-विस्तार की है, जिसमें हमें स्वयं को परिष्कृत कर दूसरों को भी नव जीवन की विचारधारा से अनुप्राणित करना है.
